मनुस्मृति में राजधर्म की अवधारणा

*डॉ. धर्मसिंह गुर्जर

सारांश

भारत वर्ष एक महान देश है। और इसकी प्राचीनता पुरी दुनिया में विख्यात है। इस देश के साहित्य, वेद, दर्शन, उपनिषद्, ब्राह्मणग्रन्थ एव मनुस्मृति आदि नानाविध साहित्य जगत के कल्याण के लिए आज भी प्रसगीक है। एक ओर जहाँ वेदों में ज्ञान, कर्म, उपासना तथा विज्ञान की बातें कही है वही दूसरी और उपनिषद आदि ग्रन्थ मानव समाज को मोक्षत्व दिलाने का मार्गदर्शन करता है। मनुस्मृति जैसा पावन धर्मशास्त्र मानव जीवन को उन्नत बनाने का विधियों को लिये हुए समाज का प्रतिनिधित्व करता है। महर्षि मनु ने आदि काल में मानव जीवन मो उन्नत प्रगतिशील और राष्ट्ररक्षा, राजधर्म और मानव धर्म के मापदण्डों के द्वारा राष्ट्र को सुबल और सुव्यवस्थित बनाने का भी महत्वपूर्ण कार्य किया है। महर्षि मनु ने अपने ग्रन्थ मे मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जहाँ संस्कारों का वर्णन किया है वही मनुष्य के जीवन को सुखमय बनाने के लिए राजधर्म का भी वर्णन किया है। महर्षि मनु ने निरूसन्देह सर्वोत्कृष्ट राजधर्म व्यवस्था का सृजन किया। आदिकाल के राजाओं को हम देखें, राजा राम से लेकर युधिष्ठिर तक और जितने भी चक्रवर्ती सम्राट आर्यावर्त्त में हुए उन सभी की व्यवस्थाओं में राजधर्म झलकता है। राजर्षि मनु ने अपने ग्रन्थ मनुस्मृति में राजधर्म का वर्णन बड़े ही चारित्रिक और राष्ट्र निर्माण का मुल मत्र पिरोया है। ग्रन्थकार अपने इस महान ग्रन्थ के द्वारा मानव समाज को सगठित वा उन्नत बनाने के लिये अनेक माध्यमों से राजधर्म की व्याख्या कर राजा, मंत्री, सभासद्, प्रजा तथा इस पर प्रयुक्त होने वाले दण्ड विधान, कर व्यवस्था, तथा न्याय व्यवस्था का बहुत सुन्दर ही वर्णन किया है अपितु इस ग्रन्थ में अनेक विषय है परन्तु मैने अपने शोध का विषय मनुस्मृति में राजधर्म लिया है जिसकों कई भागों में विभाजित कर उसके विषय में वर्णन किया जायेगा।

कूट भाब्द : मनुस्मृति, राजधर्मए दर्शन, उपनिषद, ब्राह्मणग्रन्थ

प्रस्तावना

धर्मशास्त्रं तु वे स्मृतिः स्मृतियाँ धर्मशाला है। अतः धर्मः जो राजा के धर्म है वह राज धर्म है। प्रजा पालन में दक्ष राजा को होना चाहिऐ 3 सफी दक्षता सुचारू राज्य लाने व धर्म को बढाने में होनी चाहिये। सभी धर्मशास्त्र कारों ने अपनी अपनी स्मृतियों में "राजा" के कर्त्तव्यों का उल्लेख किया है। राजा के प्रातः जागरण से रात्रि शयन तर सारे धर्म शास्त्रों में निबद्ध है उसी के अनुसार उसे रहना होता है।

1. राजधर्म

राजधर्म का आधार वेद, मनुस्मृति, उपनिषद, ब्राह्मण, ग्रंथ, आरण्यक आदि वैदिक ग्रन्थ है। राजधर्म को सभी तत्वों का सार कहा गया है। राजधर्म के बिना देश का विकास नही होता, आरम्भ में न तो राजा था न ही दण्ड व्यवस्था थी जिसके फलस्परूप मानवों में मोह मत्सन आदि का प्रवेश हो गया। अतरू राजधर्म को पूर्णरूप से बचाने के लिए महर्षि मनु ने मनुस्मृति की रचना कर समस्त मानव समाज को एकत्रित करने का महान् कार्य किया। महर्षि मनु ने अनेक विध व्यव्यस्थाओं को कहने के पश्चात् राजधर्म पर भी अपना सुदृढ़ विचार प्रस्तुत किया है वे कहते है–

राजधर्मान प्रवक्ष्यामि यथावृत्तों भवेन्नृपरू।

संभवश्च यथा तस्य सिद्धिश्य परमा यथा।।

जैसा परम विद्वान ब्राह्मण होता है वैसा विद्वान सुशिक्षित होकर क्षत्रिय को योग्य है कि इस सब राज्य की रक्षा न्याय से यथावत् करे।

त्रीणि राजाना विदथे परि विश्चानि भूषथरू सदासि।।

ईश्वर उपदेश करता है कि राजा और प्रजा की पुरूष मिलकर सुख प्राप्ति और विज्ञान वृद्धि कारक राजा प्रजा के सम्बन्ध रूप व्यवहार में तीन सभा अर्थात् विद्यार्य्यसभा और राजार्य्यसभा नियत करके बहुत प्रकार के समग्र प्रजा सम्बन्धि प्राणियों को सब ओर से विद्या प्रदान करे।

तं सभा व समितश्च सेना च।।

सभ्यं सभां में पाहि ये च सभ्यारू सभासदरू।।

अर्थात् उस राजधर्म को तीनों सभा संग्रम आदि की व्यवस्था और सेना मिलकर पालन करें।

सभासद् और राजा को योग्य है कि राजा सब सभासदों को आज्ञा दे कि हे सभा के योग्य मुख्य सभासद् मेरी सभा की धर्मयुक्त व्यवस्था की रक्षा कर। और ये जो सभा के योग्य सभासद् है वे भी सभा के व्यवस्था को पालन किया करे।

अर्थात् वर्तमान में यह संसद तथा मंत्रियों और प्रतिनिधि मण्डल, तथा विधायक से है। प्राचीन काल में सभासद ही कानून बनाने व उसे राज्य में पालन करवाने का कार्य किया करते थे। जैसे आज संसद भवन में कानून व्यवस्था अर्थात् नियम बनाने का होता है, और उतना पालन राज्य के प्रत्येक नागरिक करता है।

2. राष्ट्र

भीष्म जी राष्ट्र कीर रक्षा तथा बुद्धि का उपाय बताते हुए करते है– राष्ट्र का विकाश ग्रामों में किया जाता है। प्रत्येक ग्राम का एक ग्रामाधिपति होता है। दश ग्रामों का देश ग्रामपति और उस पर बीस ग्रामपति होता है उससे उपर सौ ग्रामपति और उस पर बीस ग्रामपति होता है उससे उपर सौ ग्रामों का अधिपति और हजार ग्रामों का अधिपति होता है। ग्रामध्पिति ग्राम का सारा वृतान्त दशाधिपति को और दशाधिपति विशतिपाल को तथा विशपिपाल शतपाल के पास और शतपाल हजार गाँवों के अधिपति को प्रस्तुत करता है। ग्राम में पाँच कर्मचारी नियुक्त करने का उल्लेख है। इस सभी कर्मचारियों के कार्य से व्यवस्था सुचारू रूप से चलती है। लेखकों और गणकों को प्रतिदिन पूवोन्ह चिन्ह्न लेखा–जोखा प्रस्तुत कर देना चाहिए।

3. आदर्श प्रजातन्त्र

राष्ट्र का आधार प्रजा होता है यदि प्रजा ही निरकुश हो, और वह सभा के अधीन या व्यवस्था में न रहे तो, सब ओर अराजकता फैल जाएगी, इसलिए प्रजा आदर्श बनकर, जन तान्त्रिक नियमों को पालन करने वाला हो।

इसका अभिप्राय यह है कि एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए, हिन्तु राजा जो सभापति तदाधीन सभा, समाधीन राज, राजा और सभा प्रजा के आधनी और प्रजा राजसभा के आधीन रहे यदि ऐसा न हो तो–

राष्ट्रमेव विश्याहन्ति तस्माद्राष्ट्री विश धातुकरू।

विशमेव राष्ट्रायाद्यां करोति तस्माद्राष्ट्री विशमत्ति न पुष्ट पशु मन्यतं इति।।

जो प्रजा से स्वतन्त्र आधीन राजवर्ग रहे तो (राष्ट्रमेव विश्याहन्ति) राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करे, इसलिए अकेला राजा स्वाधीन वा उन्मत होके (राष्ट्री विश धातुकरू) प्रजा का नाशक होता है अर्थात् (विशमेव राष्ट्रायाद्यं कारोति) यह राजा प्रजा को खाये जाता (अत्यन्त पीडिघ्त करता है) इसलिए किसी एक को राज्य में स्वाधीन न करना चाहिए जैसे सिंह वा मासाहारी ह्रष्टुष्ट पशू को मारकर खा लेते है वैसे (राष्ट्री विशमति) स्वतन्त्रं राजा प्रजा का नाश करता है अर्थात् किसी को अपने से अधिक न होने देता श्रीमान् को लूट–खूट अन्याय से दण्ड लेके अपना प्रयोजन पूरा करेगा। इसलिए चाहिए की प्रजा को सम्पूर्ण नियमों का पालन करते हुए सभी के अधीन होकर राष्ट्र उत्थान के कार्य करे।

4. मूख्य राज्याधिकारी

जिस प्रकार से घर का सचालक घर को स्वामी होता है परन्तु घर का पूरा व्यवस्था कार्य माँ के हाथों में होता है ठीक उसी प्रकार के अधिकारियों मन्त्रियों तथा राज्याधिकारियों के द्वारा राज्य का सचालन होता है उसमें अनेक गुणों का समावेश होना आवश्यक होता है।

सैनापत्य च राज्य च दण्डनेतृत्वमेंव च।

सर्वलोकाधिपत्यं च वेदशास्त्रविदहंति।।

सब सेना और सेनापतियों के ऊपर राज्याधिकार दड देनें की व्यवस्था के सब कार्यो का आधिपत्य और सबके ऊपर वर्त्तमान सर्वाधीश, राज्याधिकार इन चारों अधिकारों में सम्पूर्ण वेदशास्त्रों में प्रवीण पूर्ण विद्यावाले धर्मात्मा जितेन्द्रिय सुशील जनों को स्थापति करना चाहिए अर्थात् मुख्य सेनापति, मुख्य राजाधिकारी, मुख्य न्यायाधीश, प्रधान और राजा– ये चार सब विद्याओं से पूर्ण विद्वान होने चाहिए।

(क) राजा के गुण

भीष्म जी कहते है दया और उदारता से युक्त राजा धर्माचरण करे किन्तु कटुता न आने दे। आस्तिक रहते हुऐ दूसरों के साथ प्रेम का वर्ताव न छोडे। क्रुरता का आश्रय लिये बिना ही अर्थ संग्रह करे। मर्यादा का अतिक्रमण करते हुए ही विषयों को भोगे। श्रेष्ठ पुरूषों से उनका धन न छिने। नीच पुरूषों का आश्रय न ले अपराध को अच्छी तरह जांच परताल किये बिना ही किसी को दड न दे। गुप्त मंत्रण को प्रकट न करे। लोभियों को धन न दें। जिन्होने कभी अपकार किया हो उन पर विश्वास न करें। ईर्ष्या रहित होकर अपनी स्त्री की रक्षा करें। राजा शुद्ध रहे किन्तु किसी से घृणा न करे। स्त्रीयों का अधिक सेवन न करें। शुद्ध और स्वदिष्ट भोजन करें। परन्तु अहित कर भोजन न करें। उदण्डता छोडकर विनीत भाव से मानवीय पुरूषों का आदर सत्कार करें। निष्कपट भाव से गुरूजनों की सेवा करें। दम्भहीन होकर देवताओं की पूजा करें। आनन्दित उपाय से धन सम्पति पाने की इच्छा करें। हट छोडकर प्रीति का पालन करें। कार्य कुशल किन्तु अवसर कें ज्ञान से शून्य न हो केवल पिन्ड छुडाने के लिए किसी को शात्वना या भरोशा न दें। किसी पर कृपा करते समय आक्षेप न करें। शत्रुओं को मारकर शोक न करें। अकस्मात किसी पर क्रोध न करे। कोमल होओं परन्तु अपकार करने वाले के लिए नही।

राजा का कर्त्तव्य–भीष्म कहते है युधिष्ठिर राजा को चाहिए कि वह ऋष्टि तोमर खडग, तीखे, फरसे, और ढाल आदि तैयार कराके सदा भंडार अपने पास रखे। जिससे शत्रुओं के आक्रामण के समय प्रजा की रक्षाणार्थ सेना के

शास्त्र की कमी न होवे जैस शरद ऋतु का मोर बोलता नहीं उसी प्रकार राजा को मौन रहकर, सदा राजकिया सुचना एकत्र करना चाहिए। राजा को सदैव मधुर वचन बोलना चाहिए। सभाग्रह में या प्रजा से मिलते समय सौम्य मुख मंडल से सोभायमान होकर बातचित करना चाहिए। राजा को शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त होना चाहिए। इस प्रकार इम देखते है कि महाभारत कालीन राजा और राष्ट्र का विकास धर्म में राजा का प्रधान कर्त्तव्य माना जाता था–प्रजा रक्षण या विद्या का प्रसार।

(ख) मंत्री

श्राजा को सात्विक कुल में उत्पन्न मंत्री को मंत्री पद पर शुशोभित करना चाहिए। मंत्री को लोभ रहित होना चाहिए। राज्य के परिस्थितियों के अनुसार उपयुक्त सलाह ही मंत्री को राजा को देना चाहिए। राज्य का सदैव मंगल ही मंगल होता है। राजा या किसी के भी द्वारा यदि कभी अपमान हो भी जाए और इतने पर भी मंत्री राजा और राज्य का भला ही सोचता है तो ऐसे मंत्री को राजा का सम्मान करना चाहिए। भूलकर भी ऐसे मंत्री का राजा को अपमान नही करना चाहिए।

मन्त्रियों को निर्भीक एवं दूसरों के क्षिद्रान्वेषण करने वाला नही होना चाहिए। श्रुति एव स्मृति का ज्ञाता विनयशीलता होना चाहिए। उसे घनी– निर्धन अविद्वान एवं विद्वान सभी पर समान दृष्टि रखना चाहिए। प्रजा द्वारा लाई गई समस्या के मुख्य वादी व प्रतिवादी की बातों को भली–भाति सुनकर शतोषकर – निपटारा करने में समर्थ होना चाहिए। मन्त्रि – परिषद के सभी मन्त्रियों को इन सात व्यषनों से पूर्ण रूप से दूर रहना चाहिए शिकार जुआ, पर–स्त्री, प्रसंग, मदिरापन, कामजनित दोष, और मारना गाली बकना तथा दूसरों की चीज खराब कर देनो आदि।

(ग) राजदूत

राज्य का संचालन अनेक अधिकारियों के द्वारा होते है, उसमें महत्वपूर्ण स्थान राजदूत का होता है अन्य देशों के साथ संबध तथा, राजनैतिक व्यवस्था का बनाए रखन के लिए राजदूत का होना अति आवश्यक होता है और राजदूत के अन्दर अनेक गुणों को होना आवश्यक है।

दूत चौव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्रविशारदम्।

इङ्गिताकारचेष्टज्ञ शुचि दक्ष कुलोद्भतम्।।

जो प्रशसित कुल में उत्पन्न चतुर, पवित्र, हावभाव और चेष्टा से भीतर हृदय और भविष्यत् में होनेवाली बात को जाननेहारा सर्व शास्त्रों में विशारद चतुर है, उस दूत को राजा सभा के अन्दर रखे। और वह ऐसास हो कि राज–काम में अत्यन्त उत्साह–प्रीतियुक्त, निष्कपटी, पवित्रात्मा, चतुर, बहुत समय की बात को भी न भूलनेवाला, देश और काजानुकुल वर्तमान का कर्त्ता, सुन्दर रूपयुक्त, निर्भय और बड़ा वक्ता हो वही राजा का दूत होने में प्रशस्त है।

5. कार्य विभाग

आदर्श राष्ट्र का पतिबिम्ब उसके राज व्यवज्ञथा से परिलक्षित होता है, अैर राज्य व्यवस्था उसके कार्य प्रणाली पर निर्भर होता है। अक्सर हम वर्तमान रानैतिक परिवेश का अवलोकन करते है तों राजधर्म न्याय पालिका कार्य पालिका, विधायिका के रूप में प्राप्त होती है ठीक उसी प्रकार प्राचीन राज व्यवस्था राज्य के प्रमुख राजपुरूषों या सभासदों को ही कार्य विभाग सौपा जाता था मनुस्मृतिनुसार–

अमात्य को दण्डाधिकार, दण्ड में विनय–क्रिया अर्थात् जिससे अन्यायरूप दण्ड न होने पावे, राजा के आधीन कोश और राजकार्य तथा सभा के आधीन सब कार्य और दूत के आधीन किसी से मेल वा विरोध करना अधिकार देवे।

दूत उसको करते है जो फूट में मेल और मिले हुए दुष्टों को फोड–तोड़ देवे। दूत वह कर्म करें जिससे शत्रूओं में फूट पडे।

6. राजकोष

राष्ट्र की शक्ति उसके धनधान्य और वैभव से होती है, राष्ट्र की कर व्यवस्था जितनी पारदार्शिता होती है। उतना ही राज्य सबल होता है। राज्य का संचालन आय पर निर्भर होता है यदि कर व्यवस्था ठीक व, उसकी प्रणाली ठीक न हो तो भी राज पगु हो जाता है। इसलिए राजकोष की व्यवस्था किस प्रकार हो इस पर महर्षि मनु का विाचर प्रासगिक है।

सावत्सरिकमाप्तैश्च राष्ट्रादाहारयेद् बलिम्।

स्याच्चाम्रायपरो लोके वर्तेत पितृतन्नृष्षु।।

वार्षिक कर आप्तपुरूषों के द्वारा ग्रहण कर और जो सभापतिरूप राजा आदि प्रधान पुरूष है वे सब सभा वेदानुकुल होकर प्रजा के साथ पिता समान वर्ते।

उस राज्यकार्य में विविध प्राकर के अध्यक्षों को सभा नियत करें। इनका यही काम है– जितने–जितने जिस–जिस काम में राजपुरूष हो वे नियमानुसार वर्त्त कर यथावत काम करते है वा नही, जो यथावत् करे तो उनका सत्कार और जो विरूद्ध करें तो उनकों यथावत् दण्ड किया करे।

7. क्षात्रधर्म

राजधर्म का अनुयायी राज्य का हर नागरिक होता है परन्तु राष्ट्र की रक्षा कार्य हमेशा क्षत्रिय के हाथों में होता है क्षत्रिय का धर्म राज्य के नागरिकों तथा राष्ट्र की रक्षा हेतु अपने आप को न्यौछावर कर देना ही क्षत्रिय धर्म है। और क्षत्रिय के गुण कैसे हो इस पर मनु का वचन है।

समोत्तमाधमै राजा त्वाहुतरू पालयन प्रजा।

न निवतैत सग्रामात् क्षात्र धर्ममनुस्मरन।।

इस बात के करने से राज्य में विद्या की उन्नति होकर अत्यन्त उन्नति होती है जब कभी प्रजा का पालन करनेवाले राजा को अपने से छोटा, तुल्य और उत्तम संग्राम में आह्ववान करे तो क्षत्रियों के धर्म का स्मरण करके संग्राम में जाने से कभी निवृत्त न हो अर्थात् बड़ी चतुराई के साथ उनसे युद्ध करे जिससे अपना ही विजय हो।

जो संग्रामों में एक–दसरे को हनन करने की इच्छा करते हुए राजा लोग लितना अपना सामर्थ्य हो, बिना डर पीठ न दिखा युद्ध करते है वे सुख को प्राप्त होत है, इससे विमुख कभी न हो, किन्तु कभी–कभी शत्रु को जीतने के लिए उनके सामने से छिप जाना कभी–कभी शत्रु को जीतने के कलए उनके सामने से छिप जाना उचित है क्योंकि जिस प्रकार से शुत्र को जीत सके वैसे काम करें जैसा सिह क्रोध से सामने आकर शस्त्राग्रि में शीघ्र भस्म हो जाता है वैसे मूर्खता से नष्ट–भ्रष्ट न हो जावे।

8. राजा का राष्ट्र के प्रति कर्म

राजा को विद्या के प्रसार हेतु उचित व्यवस्था करना चाहिए। क्योकि अर्थ संकट होने पर विद्या ही पुरूष का कल्याण करने में सक्षम है। राजा का काम "कारणिको" अर्थात् आचार्यो की नियुक्ति की थी। आचार्यसाधरण लोगों को शिक्षा

देते थे जहाँ राजकुमार भी शिक्षा प्राप्त करते थे। जरासन्ध से कृष्ण ने ही कहा था कि स्नातक ब्राम्हण क्षत्रिय, वैश्य तीनों वर्गो के होते है। दुपद और द्रोण दोनों ने एक साथ शिक्षा पाई थी। इस प्रकार से अनेक कार्य राजा का राष्ट्र के प्रति वैदिक काल में प्राप्त होते है।

9. राष्ट्र रक्षा हेतु स्त्रियाँ

तुम अपने बाहुबल पर जीने वाले क्षत्रिय हो। "क्षत्रात त्राता" अर्थात् क्षित्रय बचाने वाले। तुम लोग अपने वंश की समृद्धि को साम, दाम, दण्ड़, भेद, नीति के उपाय से प्राप्त करा।

झासी की रानी लक्ष्मी बाई, अवन्तीबाई, दुर्गावती, पदमनी जैसे अनेकों रानियों ने इस राष्ट्र की रक्षा में अपने प्रणों की आहुती दी है। जो आज भी उतनी ही प्रासगीक है जितनी कभी अहिल्या, द्रोपदी, सीता, कैकयी, कौसल्या आदि रही।

इस प्रकार से वैदिक ग्रन्थों एवं मनुस्मृति में वैदिक राजधर्म की दशा परिलक्षित होती है। अर्थात् जिस प्रकार से साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति प्राचीन वैदिक काल में हमारे चक्रवर्ती सम्राट अपनाते आये है और राजधर्म का पालन करते हुए राजा तथा प्रजा उन्नति को प्राप्त हुए है उसी वैदिक राजधर्म प्ररम्परा को पुनरू कार्य प्रणाली में लाने के लिए क्या सम्भव हो सकता है? और वर्तमान राजनीति से यह कहाँ तक प्रासगीक है यही मेरे शोध का उद्देश्य है।

***सह आचार्य**
व्याकरण विभाग
राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय,
बौंली (राज.)

सन्दर्भ

1. शास्त्री राजवीर आचार्य विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1981 प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली
2. सरस्वती दवानन्द स्वामी ऋग्वेद भाष्यम सन् 2005 प्रकाशक – विश्व मानव उत्थान परिष्द पूर्वी कैलाश दिल्ली मं 3 शुक्त 38 मन्त्र6 पृष्ठ–422
3. सातवलेकर डॉ.श्रीपाद दामोदर पदमभूषण यजुर्वेदभाष्यम सन् 2005 प्रकाशक विश्व मानव उत्थान परिषद पूर्वी कैलाश दिल्ली– का 15 अनुवाक 2 व 2 मन्त्र 2 पृष्ठ 656
4. सातवलेकर डॉ.श्रीपाद दामोदर पदमभूषण अथर्ववेदभाष्यम सन 2005 प्रकाशक विश्व मानव उत्थान परिषद पूर्वी कैलाश दिल्ली– का 19 अनुवाक 7 व 55 मन्त्र 5 पृष्ठ 786
5. उपाध्याय गंगाप्रसाद पण्डित सन् 2003 शतपथ ब्राह्मण प्रकाशक विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द नई सड़क दिल्ली का 13 अनु 2 ब्रा 3
6. सरस्वती दयानन्द स्वामी सन् 2005 ऋग्वेद भाष्यम् प्रकाशक मानव उत्थान परिषद कैलाश दिल्ली अ. 22 मं. 22 पृ 419
7. कुमार डॉ. सुरेन्द्र प्रोफेसर विशुद्ध मनुस्मृति सन् 1996 प्रकाशक आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट खारी बावली दिल्ली अध्याय 7